हिन्दी साहित्य में मीराबाई एक अध्ययन

डॉ. फेदोरा बरवा

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी)
शास. जे.पी. वर्मा स्नातकोत्तर कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

सारांश :–

आज मीराबाई का नाम श्री कृष्ण के प्रति उनकी भक्ति और उनकी कलाकृतियों के लिए सम्मानपूर्वक लिया जाता है। महान संत कवियत्री मीरा बाई कृष्ण की भक्त थीं। मीरा बाई ने अपने जीवन में बहुत कष्ट सहे थे। एक राजघराने में जन्म लेने और विवाह करने के बावजूद मीरा बाई को बहुत कष्ट सहना पड़ा। इस वजह से उनके अंदर अलगाव भर गया और वे कृष्ण की भक्ति की ओर आकर्षित हो गईं। कृष्ण के प्रति उनकी भक्ति चरम स्तर तक बढ़ गई। मीराबाई पर अनेक भक्ति संगठनों का प्रभाव था। इसका चित्रण उनकी रचनाओं में मिलता है। श्पदावलीश् मीराबाई की प्रमुख प्रामाणिक अद्भुत रचना है। रामरतन पायो जी मैंने पायो। यह मीराबाई की प्रसिद्ध रचना है। वह खुद को 'मीरा के स्वामी गिरिधर नागर' कहती हैं।

मुख्य शब्दः साहित्य, भक्ति, मीराबाई, प्रेम–भाव, माधुर्यभाव

प्रस्तावना :–

मीरा जी ने विभिन्न पदों व गीतों की रचना की। मीरा के पदों में ऊँचे अध्यात्मिक अनुभव है। उनमें समाहित संदेश और अन्य संतो की शिक्षा में समानता नजर आती है उनके प्राप्त पद उनकी अध्यात्मिक उन्नति के अनुभवों का दर्पण है। मीरा के अन्य संतों की तरह कई भाषाओं का प्रयोग किया है जैसे– हिन्दी, गुजराती, ब्रज, अवधी, अरबी, फारसी, मारवाड़ी, संस्कृत, मैथली और पंजाबी। भारवेग भावनाओं की मार्मिक अभिव्यक्ति, प्रेम की ओजस्वी प्रवाहधारा, प्रीतम, वियोग की पीड़ा की मर्म भेदी प्ररवता से अपने पदों को अलंकृत करने वाली प्रेम की साक्षात मूर्ति मीरा के समान शायद ही कोई कवि हो।

मीरा के भाषा–शैली में राजस्थानी ब्रज और गुजराती का मिश्रण है। पंजाबी खड़ी बोली, पुरबी इन भाषा का भी मिश्रण दिखता है। मीराबाई की रचनाएं बहुत भावपूर्ण है। उनके का प्रतिबिम्ब कुछ पदों में भटके दिखता है। गुरू का गौरव, भगवान की तारीफ, आत्मसमर्पण ऐसे विषय भी पदों में है। पूरे भारत में मीराबाई और उनके पद ज्ञात है। मराठी में भी उनके पदों का अनुवाद हुआ हैं। उनके जन्मकाल के बारे में ठीक से जानकारी नहीं है। फिर भी मध्यकालीन में हुई भारत में की श्रेष्ठ संत कवियित्री आज भी आदर के पात्र हैं, मीरा बाई का जन्म राजस्थान में मेड़ता के निकट स्थित चौकड़ी ग्राम में सन् 1498 ई. के आस पास हुआ था। मीरा बाई के पिता का नाम रत्न सिंह था और इनका विवाह राणा सोंगा के पुत्र भोजराम के साथ हुआ था। भोजराम की मृत्यु अचानक हो जाने से मीरा बाई का जीवन अस्त–व्यस्त हो गया। वैसे तो मीरा बाल्यकाल से श्री कृष्ण भक्ति में लीन रहती थी पर पति की मृत्यु के बाद तो वे पूरी तरह से साधु संतो का सत्संग करने लगी मंदिरों में कृष्ण की मूर्ति लेकर नाचते गाते हर एक ने उन्हे देखा। इससे परिवार वाले उससे रूष्ट हो गये। कहते हैं इसी कारण से ही उनके देवर ने ही मीरा को विषपान को भजकर किया किन्तु प्रभु कृपा से उन पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ा। मीरा कृष्ण भक्ति में डुबी रही–मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरों न कोय गाती रही। मीराबाई की मृत्यु को कृष्ण में विलीन हो जाना कहते है। मीरा बाई ने गुरू के विषय में कहा है कि बिना गुरू धारा किए भक्ति नहीं की जा सकती। भक्तिपूर्ण व्यक्ति ही प्रभु प्राप्ति का भेद बता सकता है वही सच्चा गुरु है। स्वयं मीरा के पद से पता चलता है कि उनके गुरु रविदास थे।

"नाहिं मैं पीहर सासरे, नाहिं पियाजी री साथ,

मीरा ने गोविन्द मिल्या जी, गुरू मिलिया रैदास।।"1

उन्होंने धार्मिक मान्यताओं के विरूद्ध शुद्र गुरु रविदास की भक्ति की। साधु संतो की संगत की। जब मीरा बाई बहुत छोटी थी तो उनकी माता ने श्री कृष्ण जी को यूँ ही उनका दूल्हा बता दिया। इस बात को मीरा जी सच मान गई। उन पर इस बात का इतना प्रभाव पड़ा वह श्री कृष्ण जी को ही अपना सब कुछ मान बैठी।

जवानी की अवस्था में पहुँचने पर भी उनके प्रेम में कमी नहीं आयी और युवतियों की तरह वह भी अपने को लेकर विभिन्न कल्पनाएँ करती। परन्तु उनकी कल्पनाएँ, उनके सपने श्री कृष्ण जी से आरंभ होकर उन्हीं पर ही समाप्त हो जाते। समय बीतता गया। मीरा जी का प्यार कृष्ण के प्रति और बढ़ता गया। 1516 ई० में मीरा का विवाह मेवाड़ के राजकुमार भोजराम से कर दिया गया। वे मीरा के प्रति स्नेह का भाव रखते थे। परन्तु मीरा का हृदय माखन चोर ने चुरा लिया था। वह अपने विवाह के बाद भी श्री कृष्ण की अराधना न छोड़ सकी। वह कृष्ण को ही अपना पति समझती और वैरागिनी की तरह उनके भजन गाती। मेवाड़ के राजवंश को यह कैसे स्वीकार हो सकता था कि उनकी रानी वैरागिनी की तरह जीवन व्यतीत करें। उन्हें मारने की साजिशें रची जाने लगी। मीरा की भक्ति, प्रेम निश्कल था। इसलिये विष भी अमृत हो गया। उन्होंने अपना पूरा जीवन कृष्ण को ही समर्पित कर दिया। उनका कहना था –

"मेरे तो गिरधर गोपाल, दूसरों का कोई, जाके सिर मोर मुकुट मेरी पति सोई ।।

तात भात भ्रात बंधु आपनो न कोई, छाड़ि दई कुलकि कानि कहा करिहै कोई।।2

मीरा बाई की रचनाएँ :–

1. **गीत गोविन्द टीका**
2. **सोरठा के पद**
3. **राग गोविन्द**
4. **नरसी जी रो मायरो।**

उपर्युक्त चारों रचनाएँ मीरा की पदावली के नाम से संग्रहित और प्रकाशित हुई।

मीरा बाई भक्तिकालीन कवियत्री थी। सगुण भक्ति धारा में कृष्ण को आराध्य मानकर इन्होंने कविताएँ की। गोपियों के समान मीरा भी कृष्ण को अपना पति मानकर माधुर्यभाव से उनकी उपासना करती रही। मीरा के पदों में तल्लीनता, सहजता और आत्म–समर्पण का भाव सर्वत्र विद्यमान है। मीरा ने कुछ पदों में रैदास को गुरू रूप में स्मरण किया है तो कहीं–कहीं तुलसीदास को अपने पुत्रवत स्नेह पात्र बताया है। मीरा बाई की काव्य भाषा में विविधता दिखलाई देती है। ये कहीं शुद्ध ब्रजभाषा का प्रयोग करती है तो कहीं राजस्थानी बोलियों का सम्मिश्रण कर देती है। मीरा बाई को गुजराती, पूर्वी, हिन्दी तथा पंजाबी के शब्दों की बहुलायत है। पर इनके पदों का प्रभाव पूरे भारतीय साहित्य में दिखलायी देता हैं। इनके पदों में अलंकारों की सहजता और गेयता अद्भुत है जो सर्वत्र माधुर्य गुण से ओत प्रोत है। मीरा बाई ने बड़े सहज और सरल शब्दों में अपनी प्रेम पीड़ा को कविता में व्यक्त किया है। मीरा बाई की भक्ति में माधुर्य भाव काफी हद तक पाया जाता था। वह अपने इष्ट देव कृष्ण की भावना प्रियतम या पति के रूप् में करती थी। उनका मानना था कि इस संसार में कृष्ण के अलावा कोई पुरुष है ही नहीं। कृष्ण के रूप की दीवानी थी। इन्होंने जन्मजात कवियित्री न होने के बावजूद भक्ति की भावना में कवियित्री के रूप में प्रसिद्धि प्रदान की। मीरा के गीतों में समकालीन कवियों की अपेक्षा अधिक स्वाभाविकता पायी जाती है। राजस्थान की भूमि साहस व शौर्य के लिए प्रसिद्ध है। भारत में हुए साठ प्रतिशत युद्ध इसी राज्य की जमीन पर हुए। युद्धों की इस भूमि पर प्रेम की मूर्ति भी अवतारित हुई जिसका नाम था मीरा।

"मन रे पासि हरि के चरन, सुभग सीतल कमल कोमल त्रिविध ज्वाला हरन। जो चरन प्रहलाद परसे इंद्र पन्दी–हान, जिन चरन ध्रुव अटल कीन्हों राखि अपनी सरन ।। जिन चरन प्रभु परस लनिहों तरी गौतम धरनि, जिन चरन घरधो गोर्बधन गरब–मधवा–हरन । दास मीरा लाल गिरधर आजम तारण तरन।।"3

कृष्ण को आराध्य मानकर कविता करने वाली मीरा बाई की पदावलियों हिन्दी साहित्य के लिए अनमोल है। कृ ष्ण के प्रति मीरा की विरह वेदना सूरदास की गोपियों से कम नहीं है, तभी तो समित्रानंदन पंत ने लिखा है कि "मीरा बाई राजपूताने के मरूस्थल की मंदाकिनी है।"

"हेरी मैं तो प्रेम दीवानी" मेरो दर्द न जाने कोय, प्रेम दिवानी मीरा का दरद हिन्दी में सर्वत्र व्याप्त है। छाया मोरे नैनन में नंदलाल, मोर मुकूट भकराकृत कुंडल अरून तिलक दिए भाल ।।

मोहनी मुरति, सॉवरि सूरति, नैना बसे बिसाल, उधर सुधा रस, मुरली, राजति, उर बैजंती माला। धुड़ घंटिका कटि–तरि सोभित, नुपूर सब्द रसाल, मीरा प्रभु संतन सुखदाई–भगत बछाल गोपाल।।"4

मीराबाई की मृत्यु के बारे में अलग–अलग मत है। लूनवा के भरदान में मीराबाई की मौत 1546 में बताई गई। जबकि रानीगंगा के भाट में मीराबाई की मौत 1548 में बताई गई और डॉ. शेखावत अपने लेख और खोज के आधार पर मीराबाई की मौत 1547 में बताते है। हरमेन गोटटस ने मीरा के द्वारका से गायक होने की कड़ियो को जोड़ने का प्रयास किया परंतु वह मौलिक नहीं। उनके अनुसार यह द्वारका के बाद उत्तर भारत में भ्रमण करती रही उसने भक्ति व प्रेम का संदेश सब जगह पहुंचाया। चित्तौड़ के शासक कर्मकांड व राजसी वैभव में डूबकर उसे भूल चुके थे। किसी ने उसे ढूंढ़ने का प्रयास नहीं किया। अपने पांच वर्ष की अवस्था में मीरा ने गिरधर का वरण किया और उसी दिव्यमूर्ती में विलीन हो गई। धन्य है वह प्रेम की मूर्ति जिसने दैविक प्रेम का ऐसा उदाहरण दिया कि बड़े–बड़े संत भक्त की चमक भी धीमी पड़ गई। वृंदावन के सौन्दर्य और सुरम्य वातावरण ने मीरा का मन मोह लिया।

"आली म्होंने लागे वृंदावन नीको, घर–घर तुलसी, ठाकुर पूजा, दरसन गोविन्द जी को ।"5

किन्तु दरद दीवानी मीरा को वहां भी चैन न मिला। वृंदावन से मीरा अपने आराध्य की कर्मभूमि द्वारका आयी। भगवान रणछोड़ ने उनको मोहित कर दिया। वृद्धावस्था उनके निकट आ चुकी थी। ब्रम्हलीन होने की इच्छा बलवती हो उठी और एक दिन अपने प्राणों को नैवेध अर्पित करती हुई वह अति में भगवान रणछोड़ के चरणों में लीन हो गई। राजस्थान की भक्त–परंपरा में मीरा सर्वोच्च प्रदान की अधिकारिणी है, जिन्होनें अपने मधुर गीतो से अपनी प्रेम पीड़ा का मादक रस घोल दिया। इनके गीतो में जन्म जन्म से संचित प्रेम और प्रियतम से न मिलने की तड़प ने अभिव्यक्त होकर जन–जन के हृदयों के विरह–सागर में स्नान किया है। प्रेमरस का पान करने वाली कृष्ण के लिए दीवानी मीरा का संबंध रठौड़ो की एक उपशाखा मेड़तिया वंश से था। उनके जीवन की सारी कियाएँ, राग–विराग से मुक्त हो, एकमात्र अपने आराध्य कृष्ण में ही एकनिष्ठ हो गई। मीरा के किसी भी पद में रति. शोकजन्य उद्‌गार न मिलने का यही कारण है। उनका लौकिक विरह द्वारा एक दार्शनिक का यह गीता दर्शन कितना सार्थक है " हमारे सुख–दुख हमारी इस भ्रांति से जन्मते है कि जो भी मिला वह रहेगा। प्रियजन आकर मिलता है, तो सुख मिलता है लेकिन जो आकर मिलेगा वह जाएगा। वहां मिलन है, वहां विरह है।"

मिलने में विरह को देख ले तो उससे जन्म की खुशी विदा हो जाती है, उसकी मृत्यु का दुख विदा हो जाता है और जहां सुख और दुख विदा हो जाते है, वहां जो शेष रह जाते है उसका नाम ही आनंद है। आनंद सुख नही है। आनंद सुख को बड़ी राशि का नाम है। आनंद सुख के स्थिर होने का नाम नही है

' आनंद मात्र दुख का अभाव नहीं है। आनंद मात्र दुख से बच जाना नहीं है, आनंद सुख और दुख दोनो से ही ऊपर उठ जाता है। दोनो से ही बच जाना है।

"मीरा श्री कृष्ण की अनन्य अराधिका थी, कृष्ण प्रेम की साधिका थी। विरह की प्रतिमूर्ति थी, पीड़ा की आगार थी, रस का सागर थी।"6

निष्कर्ष :

मीरा का हृदय गंगा की तरह पवित्र है, जिसमें निःस्वार्थ केवल प्रेम किया है। उस प्रेम की पूजा की है। वो प्रेम में इतनी अधिक डूब चुकी थी कि वो श्री कृष्ण को अपना सब कुछ मान चुकी थी। मौरा बाई अपना पथ स्वयं बनाती थी और

उस पथ पर स्वतः चलती भी थी। उन्होंनें इस संसार को त्याग कर सिर्फ श्री कृष्ण के प्रति अपने प्रेम को न्यौछावर कर दिया। मीराबाई ने लोक–लाज को त्यागकर श्री कृष्ण के प्रेम में इस प्रकार से डूब गयी, मानों उन्हे इस संसार का कोई मोह नहीं था। मीराबाई श्री कृष्ण को अपना तथा ईष्ट देव समझती है। मीराबाई ने स्त्रियों को यह सिखाया और समझाया कि हमें स्वतंत्र रूप् से जीवन को जीना है। उन्होंने सती प्रथा को हटाया था और उन्हें जीने का मतलब भी समझाया था। उन्होंने स्त्रियों को स्वतंत्र रहने की राह को दिखाया है। हर एक बंधन से मुक्ति को समझाया है। नारी की चेतना को जागृत किया है। मीराबाई को इस संसार की हर वस्तु व्यर्थ लगने लगी थी। उन्हें तो केवल घुंघरू बांधकर इस मंदिर से उस मंदिर में जाकर नृत्य तथा गाना, गाना अच्छा लगता था। उनका प्रेम अमर है, जिसे सारा संसार प्रेम की देवी कहता है। मीरा बाई ने यह भी समझाया कि प्रेम से बड़ा कोई धर्म नहीं है। वह तो आकाश की तरह असीम हैं। उनका प्रेम साधना की शक्ति पाकर भक्ति में परिवर्तित हो जाता है। वह श्री कृष्ण के प्रेम में आराधिका तथा साधिका के रूप में अमर हो गई।

संदर्भ :–

1. पाठक, डॉ. विनय कुमार, (2005), 'मीरा की प्राशंगिकता', प्रकाशक, बिलासा कला मंच, प्रथम संस्करण, पृ०क्र0–27
2. पाठक, डॉ. विनय कुमार, (2005), 'मीरा की प्राशंगिकता', प्रकाशक, बिलासा कला मंच, प्रथम संस्करण, पृ०क्र०–89
3. पाठक, डॉ. विनय कुमार, (2005), मीरा की प्राशंगिकता', प्रकाशक, बिलासा कला मंच, प्रथम संस्करण, पृ०क्र0–96
4. पाठक, डॉ. विनय कुमार, (2005), मीरा की प्राशंगिकता', प्रकाशक, बिलासा कला मंच, प्रथम संस्करण, पृ०क्र०–36
5. अग्रवाल, डॉ. गिरिराज शरण, (2014), मीरा : जीवनी व साहित्य, प्रकाशक : डायमंड पॉकेट बुक्स (प्रा.) लि. संस्करण, पृ. 22